ISSN 2455-5169

परिवर्तन : साहित्य, संस्कृति एवं सिनेमा की वैचारिकी

संस्कृति विमर्श में सम्मिलित करती कविताएँ

(भालचन्द्र नेमाड़े के 'देखणी' काव्य-संग्रह की समीक्षा)

मोबिन जहोरोद्दीन

smobin304@gmail.com

भालचन्द्र नेमाड़े के हिन्दी में सद्य अनुदित काव्यसंग्रह 'देखणी' में सन् 1958 से 91 के बीच लिखित 36 कविताओं को संकलित किया गया है। न्यूनतम विरामचिन्हों का प्रयोग, छन्दों की मुक्तता, अभंग, वही, देखणी जैसे लोक-काव्य प्रकार, कविताओं में विकेन्द्रीकृत वस्तु, प्रस्तुत परिवेश की न्यूनताओं की ख़ामियों को पूरा करने के लिए निसर्ग के सौदर्य के प्रतीकों की सम्पन्नता, भिन्न संस्कृतियों के एकाकार होने की प्रक्रिया, स्त्रियों पर लादी गईं रूढ़ियों का बोझ, मृत्यु के विकराल जबड़ों से झाँकती कोंपलें, असहाय के सन्दर्भ में वारकरियों की कविताओं से अभिव्यक्त होती अपार करुणा, निष्कासितों-विस्थापितों के दुःख तथा जन्म-मृत्यु के बीच मनुष्य के सृजनात्मक जीवन के सन्दर्भ में कौतुहल के साथ व्यंग्य की हल्की रेखाएँ (अनुवाद होने के कारण भाषा अथवा शब्द-चयन पर बात करना बेईमानी होगी) आदि विशेषताएँ भालचन्द्र नेमाड़े के इस कविताओं में पहले ही पठन में ध्यानाकार्षित कर जाती हैं। इन विषयों को नारेबाज़ी या तीव्रता से भी अधिक अभिव्यक्त किया जा सकता है, किन्तु नेमाड़े का अपने काव्य-वस्तु पर अधिकार कहिए या कुछ और, वे इसे धीरज के साथ प्रस्तुत करते हैं, मानों उसमें व्याप्त गरल के रचनाकार स्वयं पीकर नफ़रत न परोसकर उससे झरनेवाला प्रेम अपनी कविताओं में अभिव्यक्त करते हैं। इस संग्रह में 'कसाईख़ाना', 'ख़ुदकुशी', 'विस्थापन', 'राम राम ! चला गया बेचारा', 'आत्मालाप', 'आत्मचरित्र' ऐसी ही कुछ कविताएँ हैं, जहाँ जीवन के गहन विषाद और दुःखों को अभिव्यक्त किया गया है, किन्तु कविता के अन्त में एक ऐसा जीवन-संगीत तथा जीवन की ऐसी कोंपल

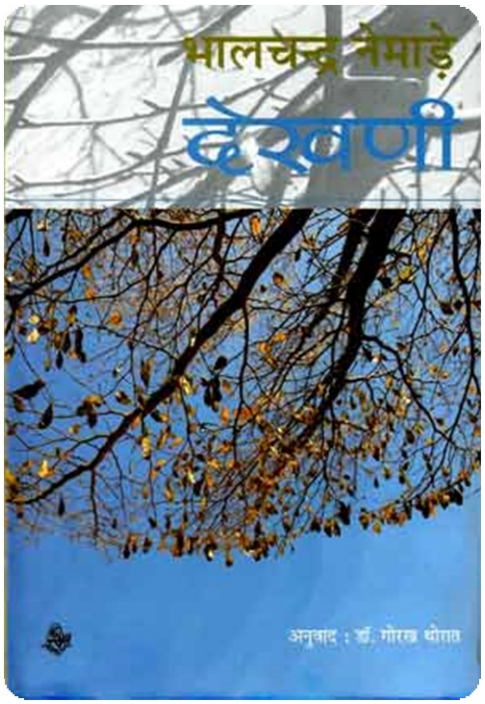

उगती हुई नजर आती है कि पाठक की रगों में जिजीविषा संचरित हो उठती है। जीवन एवं राजनीति की क्रूरताओं को अभिव्यक्त करनेवाली इन कविताओं में अपार करुणा पाठक के हृदय में करुणा का संचार करती है।

1960 के बाद प्रकाश में आने वाले मराठी कवियों में कोई वाद या वृत्त निर्माण करने की लालसा कम ही दिखाई पड़ती है, यही कारण है कि प्रत्येक कवि की अपनी निजी विशेषताएँ विकसित होती हैं। दिलिप पुरुषोत्तम चित्र, अरुण कोलाटकर, नामदेव ढसाळ नारायण सुर्वे के साथ-साथ नेमाड़े को जोड़ने वाली एकमात्र विशेषता के रूप में उनके द्वारा रूढ़ियों का किया गया 'शान्त विद्रोह' रेखांकित किया जा सकता है। 'देखणी' की कविताओं का विद्रोह व्यापक पैमाने में औद्योगिकीकरण के कारण स्वातंत्र्योत्तर भारत की ग्रामीण संस्कृति पर हुए हमलों, मानसिक शहरीकरण की प्रक्रिया एवं तद्जनित मूल्यों के अवमूल्यण से जुड़ी हैं। इन संकटों से आगाह करने के साथ-साथ कविताएँ 'भारतीयता' एवं 'गँवारुपन' से आलोचनात्मक नाभीनालबद्ध होने की आकांक्षा व्यक्त करती हैं। वह केवल 'माता के नाम' तक ही नहीं बल्कि 'दादी' तक भी जाना चाहती हैं, जहाँ नेमाड़े उसे समझना चाहते हैं, "जो मुझे प्राप्त हुआ लेकिन मोल जिसका समझ नहीं पाया मैं जिन्दगी भर।" ये दोनों कविताएँ परम्परा के प्रति विनम्र समर्पण को बयाँ करती हैं।

परम्परा, मूल्यों और संवेदनाओं को परखरने के क्रम में कवि बार-बार अतीत में प्रवेश करता है और कई बार कविता को आत्मचरित्रात्मक बना देता है। कई कविताएँ 'मैं शैली' की लग सकती हैं, किन्तु रचनाओं में रचनाकार को खोजना अत्यन्त फुहड़ कार्य है। नेमाड़े का 'स्व' अथवा 'मैं' उतना ही आत्मवृत्त है, जितना वारकरियों का। वह फिर चाहे 'आत्मालाप', 'आत्मचरित्र' या फिर 'विस्थापन का गीत' ही क्यों ना गा रहे हों। इन कविताओं में काव्य-चरित्र के आत्मसंघर्ष से आत्ममूल्यांकन करते हुए मानवीय संवेदनाओं तक पहुँचने का प्रयास स्पष्ट रूप से दिखाई देते है। इसे वह 'रातरानी' से लेकर 'एक बार फिर कॉलेज में' तक खोजते फिरते हैं।

सम्पूर्ण संग्रह में स्त्री और उससे जुड़े प्रश्नों की अत्यन्त उपस्थिति देखी जा सकती है। यहाँ स्त्री केवल 'दया माया ममता लो आज' के रूप में नहीं, प्रश्नों के रूप में आती है। प्रतिप्रश्न उपस्थित किया जा सकता है कि क्या नेमाड़े को (पुरुष होने के नाते) स्त्री प्रश्न प्रस्तुत करने का अधिकार है ? इसका उत्तर स्वयं यह कविताएँ हैं। वास्तव में कवि स्त्रियों की ओर से प्रश्न नहीं पूछता न उनका मुक्तिदाता या मसीहा

बनना चाहता है। यह कविताएँ स्वयं स्त्रियों से प्रश्न पूछती हैं। संग्रह की 'कुलीन व्यथाएँ' कविता बहुत कुछ पूछती है:

"किसके लिए यह मौन धीमी प्रतीक्षा?
दहलीज़ में रोपी चूडियों की नक़्क़ाशी के ही पल्ले पड़नेवाली
जुम्बिश तुम्हारी अँगूठियों की किसके लिए?
कितने दिन... दर्पण को ही ज्ञात तुम्हारा यह
तराशे सिन्दूर की चाँदनी तले बदरंग माथा भोर का?
.....
क्यों ओढ़ती हो घूँघट सुबह-शाम माथे तक हमेशा
मेरे सामने भी... हमारे ही अपने घर में?

इन प्रश्नों के उत्तर कवि के पास नहीं हैं? लेकिन वह कहता नहीं। उन्हें अनुत्तरित रहने देता है। संग्रह की लगभग आधी कविताओं में स्त्री के दादी से लेकर रंडी तक के रूपों को उकेरने की कोशिश की गयी है, हर बार उनसे प्रश्न पूछा गया है। यह प्रश्न कोई आध्यात्मिक अथवा दर्शन के प्रश्न नहीं, रोजमर्रा जीवन के प्रश्न हैं: 'कैसे बनाती हो रंगोली' 'कैसे लीपती हो आँगन का कोना-कोना' 'कैसे बनी रहती हो शिल्पसुन्दरी'। वह इन कविताओं में 'प्यारी' और 'सखी' बनकर आती हैं। और कवि उनका सखी बन जाता है। उसके जीवन में भी उसके साथ और 'आत्महत्या' में भी। इस बहाने एक पुरुष स्वयं अपनी आत्मसमीक्षा करता चलता है, वह भी अपने आप को स्त्री तथा उसके दाय के सम्मुख रखकर।

भालचन्द्र नेमाड़े की कविताओं की आस्था 'संस्कृतियों के टकराव' की अपेक्षा 'संस्कृतियों के समन्वय' में अधिक व्याप्त है। संस्कृतियों को निगलने वाले इस समय में उनकी 'प्यारी' 'कसाईख़ाना' 'दंगा' 'विस्थापन का गीत' आदि कुछ कविताएँ ही नहीं, उनकी कविताओं की लोक संस्कृति (जो अनुवाद में अधिकांश खो गयी है) हमारी सांस्कृतिक विरासतों, उसकी बहुवचनियताओं को संभालने के लिए, उस पर सोच-विचार करने के लिए प्रेरित करती हैं। यह कविताएँ स्वभावतः राजनीतिक कविताएँ होते हुए भी राजनीतिक 'बयानबाज़ी' और नारेबाज़ी से सुरक्षित अन्तर पर खड़ी होकर उनकी शवपरीक्षा करती हैं। वे किसी को न मरहम लगाती हैं और न बख्शती है, वह इतिहास का बहाना बनाकर किसी को चोट पहुँचाने से बचते हुए इतिहास को आत्मसात करती हैं। यही कारण है कि उनकी कविता में अमीर खुसरो भी आते हैं और बहादुरशाह ज़फर भी। संस्कृति का वर्तमान और अतीत एक साथ प्रकट होते हैं। और अन्ततः

कवि अपनी सकारात्मक दृष्टि से दोनों में सम्मिलन बिन्दु ढूँढ़ निकालने में सफल होता है। जहाँ इतिहास को 'क़त्लगाह' बताया जा रहा है, वहाँ वह कसाई में भी करुणा का संचार कर देता है। इस रूप में नेमाड़े की कविताएँ वर्तमान में अत्यावश्यक सांस्कृतिक विमर्श की कविताएँ हैं। इस क्रम में वे अपनी काव्य-वस्तु पर नियंत्रण रखते हुए साम्प्रदायिकता के मुद्दे को सघन रूप से अपनी कविताओं में व्यक्त करते है:

गली-कूचे में घूमती मरियल गायों के
केवल हिकरने से ढह जाते हैं
अल्पसंख्य अरबी घोड़े हिनहिनाकर गाँव-गाँव
और ध्वस्त कर तोपख़ाने से दक्खन को
मुहल्ले पक्के गाड़कर बैठा मुसलमान रहता है हज खोदते---
सँभालते बचा-खुचा सेव-चिउड़े की झुलसी परात में
उसकी दुकान में अँगार बस दहकती राख
बम्बे के बिना बुझी हुई. पीछे की ध्वस्त दुकान
अभागे आठ शतकों के इतिहास की और सहते हुए झुँझलाहट पंचनामों की ओर
गुनगुनाते हुए कि न नूर हूँ किसी की आँख का।

'दंगा' कविता की इन पंक्तियों का अन्त बहादुरशाह ज़फ़र की जिन पंक्तियों से किया गया है, या फिर 'प्यारी' कविता का अन्त अमीर खुसरो की 'यदि धरती पर स्वर्ग कहीं है तो यहीं है यहीं है' से किया गया है, वे कविताओं को अत्यन्त सघन ऐतिहासिक सन्दर्भ प्रस्तुत करती हैं। जिस प्रकार के सघन सन्दर्भ भारतीय संस्कृति और विशेष रूप से कहा जाए तो कोंकणी सन्दर्भ (संग्रह के शीर्षक पर गौर करें) उनकी कविताओं में आते हैं, उसी प्रकार के प्राकृतिक और ऐतिहासिक सन्दर्भ भी। स्पष्टवादिता और लगभग नारेबाज़ी से युक्त समकालीन हिन्दी कविता में उतनी सघनता शेष नहीं रह गयी है, जितनी इन कविताओं में मौजूद है। वैसे अनुवाद की प्रक्रिया में यह सघनता काफी मात्रा में कम हुई है, किन्तु समकालीन हिन्दी पाठक की दृष्टि से वह भी अधिक है। विशेषतः सांस्कृतिक-ऐतिहासिक सन्दर्भ। इस रूप में कविताओं का भाषानुवाद तो ठीक कहा जा सकता है, किन्तु उसमें परिव्याप्त संस्कृति और इतिहास को अनुवादक हिन्दी में लाने में अपेक्षाकृत कम सफल हुआ है। भाषा में व्याप्त लोक की रक्षा भी अनुवाद नहीं कर पाया। खासकर नेमाड़ी की कोंकणी दृष्टि को अनुवाद लील गया। आवश्यक स्थानों पर विरामचिन्हों का अभाव कविताओं को कुछ दुरूह बना देता है। कई बार ऐसा लगता है, मराठी और हिन्दी के काव्य-भाषा के अन्तर को समझने में अनुवादक का अनुवाद सक्षम नहीं बन पाया।

संस्कृतनिष्ठता के मोह से बचा जा सकता था, जो नेमाड़े की मराठी की विशेषता है। लोकभाषाओं का छोंक लगाना आज के अनुवादकों के लिए अत्यन्त अनिवार्य होता जा रहा है।

नेमाड़े अपनी कविताओं में तमाम दुःख, विषाद तथा व्यथाओं को अभिव्यक्त करते हुए भी आशावादी अपने काव्यशिल्प की एक खास विशेषता के माध्यम से बनते हैं, वह है उनकी कविताओं की अन्तिम दो-चार पंक्तियाँ। कवि वस्तु में अभिव्यक्त तमाम विषाद इन्हीं अन्तिम बन्धों में जिजीविषा में तब्दिल कर देता है। सारे गरल को इन्हीं पंक्तियों को पिला देता है। 'देखणी' संस्कृति विमर्श एवं चिन्ता में अत्यन्त शान्ति से पाठकों को शामिल कर लेती हैं। ठीक वैसे ही जैसे 'देखणी' नामक कोंकणी लोक-कला प्रकार।

काव्य-संग्रह: देखणी
कवि: भोलचन्द्र नेमाड़े
अनुवाद: डॉ.गोरख थोरात
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली.